विद्यालयी स्तर पर विद्यार्थियों की बढ़ती हुई व्यवहारगत समस्याएँ–एक गंभीर चुनौती

चित्ररेखा*
मनोज कुमार**

आज के इस बदलते हुए समय में विद्यार्थियों के व्यक्तिगत व्यवहार में बड़ी तेज़ी से परिवर्तन आ रहा है। समय के अनुसार व्यक्तिगत व्यवहार में परिवर्तन आना प्रकृति का स्वाभाविक नियम है। यह परिवर्तन आते भी रहना चाहिए। व्यवहार में आने वाला यह परिवर्तन यदि सकारात्मक और प्रगतिशील होता है, तब इससे विद्यार्थी को व्यक्तिगत व सामाजिक, दोनों रूप से लाभ होता है और उसके इस व्यवहार परिवर्तन से समाज को भी लाभ होता है। एक अच्छे व सभ्य समाज का निर्माण होता है। परंतु यदि विद्यार्थी के व्यवहार में अनुपयुक्त परिवर्तन होता है तो यह समाज के लिए बहुत बड़ा खतरा बन जाता है। वर्तमान समय में हमारे विद्यार्थियों के व्यवहार में होने वाला परिवर्तन अनुपयुक्त एवं नकारात्मक दिशा की ओर गतिशील है। वे लगातार समाज विरोधी व्यवहार को सीख रहे हैं। यदि हम प्राचीन समय (वैदिक समय) के विद्यार्थी और आधुनिक समय के विद्यार्थी के व्यवहार की तुलना करें तो हम पाते हैं कि प्राचीन समय का विद्यार्थी अपने जीवन में आदर्शों और सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों को अपनाता था। माता-पिता, अध्यापक तथा समाज उसे आदर्शों व मूल्यों की शिक्षा प्रदान करते थे परंतु वर्तमान समय में धीरे-धीरे ये सांस्कृतिक मूल्य, आदर्श हमारे विद्यार्थी के व्यवहार से दूर होते जा रहे हैं और जिसके कारण वह ड्रग्स सेवन, बलात्कार, चोरी करना, अवज्ञा करना, आत्महत्या, सामाजिक नियमों का उल्लंघन करना, हिंसा करना जैसे बाल अपराधों में लिप्त होते जा रहे हैं।

* *प्रवक्ता,* जिला संसाधन इकाई (डी.आर.यू. विभाग), मंडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, धुम्मनहेड़ा राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली-110073
** *टी.जी.टी. (सोशल साइंस),* शिक्षा विभाग, रा.व.बा.वि., मोती बाग, नयी दिल्ली-110021

वे अपने व्यक्तिगत व्यवहार को लेकर तनावग्रस्त हैं और कभी-कभी स्वयं के ही व्यवहार के कारण स्वयं के लिए एक गंभीर समस्या अनुभव करने लगते हैं। वे अपने इस अनुपयुक्त व्यवहार और इसके कारणों को समझने में अपने आप को असमर्थ पाते हैं। अधिकांश विद्यार्थियों को अपने इस अनुपयुक्त व्यवहार के कारण विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। विद्यार्थियों की व्यवहारगत समस्याओं, उनके प्रकारों एवं कारणों को समझकर उनका हल ढूँढना या हल ढूँढने में विद्यार्थियों की सहायता करना अध्यापक व समाज के समक्ष एक बहुत बड़ी चुनौती है। इसलिए अध्यापक, माता-पिता व समाज को अपने विद्यार्थियों द्वारा किए जाने वाले अनुपयुक्त व्यवहार व उसके कारणों को समझना बहुत ज़रूरी है। इस लेख के द्वारा विद्यार्थियों की व्यवहारगत समस्याओं, उनके प्रकारों, कारणों एवं परिणामों के साथ-साथ व्यवहारगत समस्याओं को हल करने के उपायों पर चर्चा की गई है।

व्यवहार क्या है? व्यवहार से अभिप्राय प्राय: एक दूसरे के साथ बात करने, संपर्क बनाए रखने की शैली से है। यह एक ऐसी कड़ी है, जो समाज को एक साथ जोड़े रखने का काम करती है। भाषा, हाव-भाव, विचार और आदतें व्यवहार के मुख्य घटक हैं।

व्यवहारगत समस्या

व्यवहारगत समस्या-व्यवहार शैली में आने वाले अनुपयुक्त परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाली समस्या है। ये समस्याएँ विद्यार्थी की अंतर्दशाओं को न समझने के कारण और प्राय: ध्यान में न आने वाले बाह्य एवं दूसरे दबावों या दूसरों द्वारा नहीं समझे जाने वाली बातों से उत्पन्न होती हैं।

व्यवहारगत समस्याओं की प्रकृति

1. व्यवहारगत समस्याओं की प्रकृति शाश्वत एवं सार्वभौमिक है। कोई भी प्राणी अपने आप में पूरी तरह से पूर्ण नहीं है। उसके व्यवहार में किसी न किसी प्रकार की अनुपयुक्तता का पाया जाना स्वाभाविक है।
2. व्यवहारगत समस्याएँ प्रत्येक अवस्था में पाई जाती हैं। ये बाल्यवस्था से लेकर वृद्धावस्था तक पाई जाती हैं। व्यवहारगत समस्याएँ आनुवांशिकता की देन हो सकती हैं।
3. आयु, अनुभव एवं परिपक्वता के अनुसार व्यवहारगत समस्याएँ कम और ज़्यादा हो सकती हैं। आयु, अनुभव एवं परिपक्वता का व्यवहारगत समस्याओं के साथ विपरीत संबंध पाया जाता है। अर्थात् आयु, परिपक्वता और अनुभव बढ़ने पर व्यवहारगत समस्याएँ कम होती चली जाती हैं। जैसे बाल्यवस्था और किशोरावस्था में पाई जाने वाली व्यवहारगत समस्या, वृद्धों की तुलना में आनुपातिक रुप से अधिक होती है।
4. व्यवहारगत समस्याएँ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रुपों में व्यवहार में देखी जा सकती हैं।

प्रत्यक्ष व्यवहारगत समस्याएँ	अप्रत्यक्ष व्यवहारगत समस्याएँ
• शर्मीलापन	• गुमसुम
• डरना	• चिंता
• आक्रामकता	• ध्यान की कमी
• अनादर,अवज्ञा	• दिवास्वपन
• बाह्य निर्भरता	
• चिड़चिड़ापन	
• चोरी	
• नशा	

5. व्यवहारगत समस्याएँ कई प्रकार एवं कई कारणों के द्वारा उत्पन्न हो सकती हैं। क्वेरी (1972, 1975) ने व्यवहारगत समस्याओं को चार समूहों में वर्गीकृत किया और सैंकड़ों व्यवहार-विकृत बच्चों से संबंधित विस्तृत आँकड़े एकत्रित किए, जिनमें माता-पिता और अध्यापकों द्वारा व्यवहार-मूल्यांकन, जीवनवृत्त (जीवन इतिहास) और स्वयं बच्चों से प्रश्नावलियों के उत्तर सम्मिलित थे। सांख्यिकी विश्लेषण से पता लगा कि समस्याएँ समूहों या गुच्छों में पाई जाती हैं। जिन बच्चों ने किसी एक समूह विशेष के कुछ व्यवहार प्रदर्शन किए। उनमें उसी समूह की अन्य विशेषताएँ और व्यवहार प्रदर्शित करने की उच्च संभावना पाई गई।
6. व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर अलग-अलग विद्यार्थियों में अलग-अलग प्रकार की व्यवहारगत समस्याएँ पाई जा सकती हैं। लड़कों और लड़कियों में भी अलग-अलग व्यवहारगत समस्याएँ हो सकती हैं।

व्यवहारगत समस्याओं का विद्यार्थी के विकास पर प्रभाव –

1. **सामाजिक समायोजन** – व्यवहारगत समस्या के कारण विद्यार्थियों को समाज में समायोजन संबंधी समस्या का सामना करना पड़ता है क्योंकि विद्यार्थियों को उनके अनुपयुक्त व्यवहार के कारण उनके माता-पिता, भाई-बहन, अध्यापक व समाज के अन्य लोग पसंद नहीं करते और उनसे दूरी बनाए रखना पसंद करते हैं, जिस कारण विद्यार्थी और समाज के बीच की दूरी बढ़ती जाती है। समाज और परिवार के दोषपूर्ण दृष्टिकोण से जैसे अस्वीकृति, अतिरक्षण और अति अपेक्षा के कारण विद्यार्थियों में कई संवेगात्मक और व्यवहारगत समस्याएँ, जैसे आक्रमकता, सिर पीटना, झल्लाहट आदि विकसित हो जाती हैं।
2. **जीवन कौशल के विकास में बाधक** – जीवन कौशल का अर्थ है जीवन को अच्छे प्रकार से जीने की कला। व्यवहारगत समस्या

ग्रस्त विद्यार्थी अनुपयुक्त व्यवहार करना सीख जाते हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि उनका बौद्धिक विकास, निर्णय शक्ति, चिंतन शक्ति, सृजनात्मक शक्ति आदि प्रभावित होते हैं।

3. **वर्तमान एवं भावी जीवन पर प्रभाव** – किसी भी विद्यार्थी का वर्तमान व्यवहार सिर्फ़ एक दिन का परिणाम नहीं होता। उस व्यवहार में उसकी आदतों, वातावरण, अनुभव एवं परिपक्वता का भी समावेश होता है। उसकी छोटी-छोटी आदतें ही उसके व्यवहार का निर्माण करती हैं। परंतु एक विद्यार्थी, विद्यार्थी बनने से पहले एक छोटा बालक होता है और जब वह छोटा होता है, तो माता-पिता व समाज उसकी व्यवहारगत समस्याओं को बालक समझकर नज़रअंदाज़ कर देते हैं जैसे उसका बार-बार शरमाना, झूठ बोलना, चोरी करना, चीजों को छिपाकर रखना, विपरीत बोलना आदि उन्हें उस समय अच्छा लगता है और माता-पिता का यह व्यवहार बालक/विद्यार्थी को अनुपयुक्त व्यवहार को दोहराने के लिए प्रोत्साहन देता है परंतु जैसे-जैसे विद्यार्थी बड़े होते हैं और अपने अनुपयुक्त व्यवहार को सही समझ कर उसकी पुनरावृत्ति करते हैं, तो वही माता-पिता और समाज उसके सामने कई बड़ी चुनौतियाँ खड़ी कर देते हैं जिस कारण विद्यार्थियों का भावी जीवन कष्टमय हो जाता है।
4. **समन्वित व्यक्तित्व विकास में बाधक**– समन्वित व्यक्तित्व विकास का अर्थ है विद्यार्थी के आंतरिक गुणों, भावों के साथ-साथ उसके बाहरी व्यवहार गुणों आदि का विकास होना। व्यवहारगत समस्याएँ विद्यार्थी के अंदर आंतरिक व बाहरी गुणों के विकास में बाधा डालती हैं जिस कारण विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का समन्वित रुप से विकास नहीं हो पाता।
5. **सर्वांगीण विकास में बाधक**– सर्वांगीण विकास का अर्थ होता है *विद्यार्थी के सभी पक्षों अर्थात् उसका शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, नैतिक, भाषायी एवं सांस्कृतिक* आदि रुप से विकास होना। विकास के ये प्रत्येक पक्ष एक-दूसरे के साथ जुड़े हैं। इनमें से किसी एक पक्ष का विकास न होना भी व्यवहारगत समस्या को जन्म देता है और विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास में बाधा डालता है।
6. **मानसिक एवं ज्ञानात्मक विकास में बाधक** – व्यवहारगत समस्याएँ विद्यार्थी के अंदर तनाव को जन्म देती हैं। उसके मानसिक एवं ज्ञानात्मक विकास को प्रभावित करती हैं, जिसका असर विद्यार्थी द्वारा प्राप्त की जाने वाली उपलब्धियों पर पड़ता है।
7. **नकारात्मक आत्मप्रत्यय को प्रोत्साहन** – व्यवहारगत समस्याएँ विद्यार्थी के अंदर नकारात्मक आत्मप्रत्यय को जन्म देती हैं। नकारात्मक आत्मप्रत्यय से तात्पर्य है कि विद्यार्थी की स्वयं के प्रति नकारात्मक सोच का होना। ऐसी स्थिति में विद्यार्थी के अंदर यह सोच विकसित हो जाती है कि वह कुछ नहीं कर सकता। वह अपनी क्षमताओं को अपनी वास्तविक क्षमताओं से कम आँकने लगता है।

उदासीन रहने लगता है और अपने आप को असफ़ल मानने लगता है। जो कि उसके जीवन के लिए एक गंभीर समस्या बन सकता है।

8. **बाल अपराधों को बढ़ावा देना** – व्यवहारगत समस्याएँ विद्यार्थी के अंदर विभिन्न बाल अपराधों को बढ़ावा देती है जैसे –

- चोरी करना,
- रौब झाड़ना,
- ड्रग्स सेवन,
- कामुक या उत्तेजक बनाना,
- अवज्ञा करना,
- सामाजिक नियमों का उल्लंघन करना,
- हिंसक बनाना / उपद्रवी बनाना आदि।

व्यवहारगत समस्याओं के गंभीर परिणामों के कारण यह नितांत आवश्यक हो जाता है कि समय के साथ-साथ व्यवहारगत समस्या और उसके कारणों का निदान कर उनका उपचार किया जाए। निदान का अर्थ है *व्यवहारगत समस्याओं के लक्षणों को पहचानना* जैसे, यह पहचानना कि विद्यार्थी विशेष के अंदर कौन सी व्यवहारगत समस्या है? यह समस्या किन-किन कारणों की वजह से हो सकती है? इसलिए व्यवहार-समस्याओं का उपचार करने से पहले व्यवहारगत समस्याओं का निदान करना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि कारणों को जानने के बाद ही किया गया उपचार सफ़ल हो सकता है अन्यथा किया गया प्रयास *अँधेरे में तीर मारने के समान होगा*।

व्यवहारगत समस्याओं का उपचार करते समय अध्यापक को मुख्य रूप से तीन कार्य करने चाहिए-

1. व्यवहारगत समस्याओं की पहचान करना।
2. व्यवहारगत समस्याओं के पीछे के कारणों को जानना।
3. व्यवहारगत समस्याओं के कारणों को जानकर उनका उपचार करना।

व्यवहारगत समस्या की पहचान करना

सर्वप्रथम अध्यापक को विद्यार्थी विशेष की व्यवहारगत समस्या की पहचान करनी चाहिए। पहचान करते समय उसे निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिएँ -

1. एक विद्यार्थी के अंदर एक से ज़्यादा व्यवहारगत समस्या भी पाई जा सकती हैं। जैसे विद्यार्थी का आक्रामक होने के साथ-साथ गुमसुम रहना। एक व्यवहारगत समस्या दूसरी व्यवहारगत समस्या को जन्म दे सकती है।
2. लड़के और लड़कियों की व्यवहारगत समस्याएँ व उनके कारण अलग-अलग हो सकते हैं।
3. विभिन्न परिस्थितियाँ एवं व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर विभिन्न विद्यार्थियों की व्यवहारगत समस्याएँ अलग-अलग हो सकती हैं।
4. शारीरिक, *मानसिक रूप से अक्षम विद्यार्थियों* और सामान्य विद्यार्थियों की व्यवहारगत समस्या और उनके कारणों में अंतर पाया जा सकता है। शारीरिक अक्षमता या दृष्टि-विकलांगता वाले विद्यार्थी की तुलना में मानसिक विकलांगता वाले विद्यार्थी प्रतिक्रिया स्वरूप अधिक उग्र हो जाते हैं।

विधि – व्यवहारगत समस्याओं की पहचान करने के लिए अध्यापक अवलोकन विधि का प्रयोग करने के साथ-साथ सामुहिक क्रियाकलापों का प्रयोग भी कर सकता है। यदि किसी विद्यार्थी विशेष की विशेष व्यवहारगत समस्या और उसके कारणों को जानना है, तो व्यक्तिगत अध्ययन विधि का प्रयोग भी किया जा सकता है।

व्यवहारगत समस्या उत्पन्न होने के कारणों को जानना

किसी भी विद्यार्थी को उसके द्वारा दूसरे के साथ किए जाने वाले व्यवहार से अच्छा या बुरा माना जाता है। यदि विद्यार्थी अपने मित्रों, अध्यापकों, माता-पिता, भाई-बहनों व समाज के अन्य लोगों के साथ अच्छा एवं उपयुक्त व्यवहार करता है तो उसे अच्छे व्यवहार वाला विद्यार्थी माना जाता है। परंतु यदि विद्यार्थी इसके विपरीत व्यवहार करता है तो उसे बुरे व्यवहार वाला विद्यार्थी माना जाता है।

यहाँ पर एक प्रश्न उठता है कि हम किस व्यवहार को अच्छा कहें और किस व्यवहार को बुरा? हमारे समाज में अच्छे व्यवहार से तात्पर्य प्राय उस व्यवहार से माना जाता है, जो उपयुक्त हो और समाज में स्वीकार्य होने के साथ-साथ कानून के दायरे में आता हो। यदि विद्यार्थी इसके विपरीत व्यवहार करता है, तो उसे बुरे व्यवहार वाला विद्यार्थी मानकर, माता-पिता व समाज उसका बहिष्कार करते हैं और उसे समाज से अलग कर देते हैं। अब दूसरा प्रश्न यह उठता है कि क्या विद्यार्थी अपने इस व्यवहार के लिए स्वयं उत्तरदायी हैं? क्या वे यह व्यवहार जन्म के साथ ही लेकर पैदा होते हैं? यदि नहीं तो वह अच्छा या बुरा व्यवहार करना कहाँ से और कैसे सीखते हैं? उनके इस अच्छे व बुरे व्यवहार के लिए कौन-कौन से कारक उत्तरदायी हैं?

व्यवहारगत समस्याओं के लिए उत्तरदायी कारक

इस बात को नकारा नहीं जा सकता है कि प्रत्येक विद्यार्थी के पास जन्म से ही कुछ जन्मजात शक्तियाँ होती हैं, जो उसे पैतृक रूप से अपने माता-पिता व पूर्वजों से प्राप्त होती हैं और वे उसे व्यवहार करने में मदद करती हैं। इसीलिए व्यवहारगत समस्याएँ कुछ सीमा तक आनुवांशिकता की देन हो सकती हैं। परंतु विद्यार्थी को व्यवहार सिखाने में उसके वातावरण एवं उसके आस- पास के परिवेश का सबसे अधिक योगदान होता है इसीलिए किसी विद्यार्थी का व्यवहार उसका स्वयं का व्यवहार न होकर अप्रत्यक्ष रूप से उसके माता पिता और उसके आस-पास के परिवेश का व्यवहार होता है। विद्यार्थी तो सिर्फ़ उनके द्वारा सिखाये गये व्यवहार को अभिव्यक्त करता है।

इस संबंध में मनोवैज्ञानिक **'वाटसन'** ने भी कहा है कि "व्यवहार को सीखने में वातावरण सबसे अधिक भूमिका निभाता है।" उन्होंने वातावरण पर अधिक महत्व देते हुए कहा है कि "तुम मुझे एक दर्जन स्वस्थ बालक दे दो, मैं उसे वातावरण के प्रभाव से चोर, डाकू, डॉक्टर, वकील आदि बना सकता हूँ।"

मनोवैज्ञानिक **बन्दुरा** एवं **वायगोस्तकी** ने भी वातावरण पर बल देते हुए कहा है कि "बालक अपने व्यवहार को समाज से निरीक्षण एवं अवलोकन के द्वारा सीखता है।"

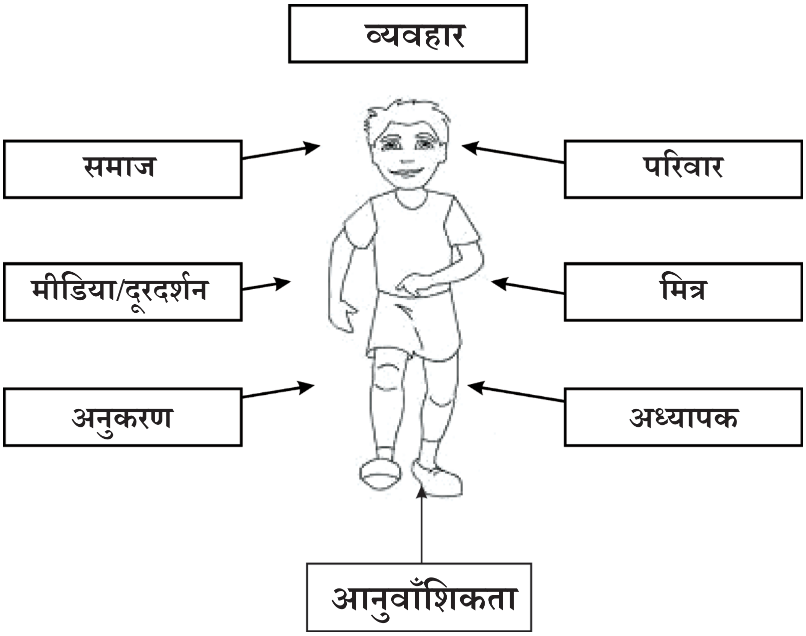

परिवार – एक विद्यार्थी, विद्यार्थी बनने से पहले एक बालक होता है। जब वह जन्म लेता है, तो सर्वप्रथम सबसे निकट अपने माता-पिता के साथ होता है। वह अपना सबसे पहला व्यवहार अपनी माता से अपने परिवार में ही सीखता है। यही कारण है कि महान् दार्शनिक **फ्रोबेल** ने *माता को बालक का प्रथम गुरु और घर/परिवार को प्रथम विद्यालय बताया।* इसीप्रकार दार्शनिक **मैजनी** ने कहा है "बालक नागरिकता का प्रथम पाठ माता के चुंबन एवं पिता के सरंक्षण के बीच सीखता है।" दार्शनिक **पेस्टोलॉजी** ने भी "परिवार को प्यार तथा स्नेह का केंद्र, शिक्षा का सर्वोत्तम स्थान तथा बालक का प्रथम विद्यालय बताया है।" *परिवार में विद्यार्थी प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, औपचारिक और अनौपचारिक रूप से व्यवहार करना सीखता है।*

परिवार कई प्रकार से व्यवहारगत समस्याओं को जन्म दे सकता है। जैसे परिवार का सामाजिक व भौतिक वातावरण। सामाजिक वातावरण से तात्पर्य है कि परिवार के सदस्यों के बीच आपसी संबंध कैसा है? परिवार के सदस्यों की जीवन शैली, उनके विचार कैसे हैं? परिवार का स्वरूप कैसा है? *भौतिक वातावरण से तात्पर्य है परिवार के पास उपलब्ध भौतिक सुविधाओं से है, जो कि बहुत कुछ उनकी आर्थिक दशा पर निर्भर करता है आदि।*

परिवार के सदस्यों के बीच आपसी संबंध – (माता-पिता के बीच प्रेम, स्नेह या अनुराग और लगाव)।

- यदि माता-पिता के बीच अच्छे मधुर संबंध हैं और वे अपने बच्चे के साथ निकटता बनाए रखने के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार करते हैं, तो विद्यार्थी

के अंदर अच्छे व्यवहार करने की क्षमता का विकास होता है। परंतु यदि माता-पिता आपस में झगड़ते हैं या फिर अपने बच्चे की तरफ़ ध्यान नहीं देते, उससे दूरी बनाए रखते हैं और उसकी अनदेखी करते हैं, तो ऐसी दशा में बच्चे के अंदर व्यावहारिक कुशलता नहीं आती। वह व्यवहारगत समस्याओं जैसे आक्रामक होना, चिड़चिड़ा होना या फिर बिलकुल चुप रहना, उदासीन रहना आदि समस्याओं से ग्रसित हो सकता है।

- यदि माता-पिता का तलाक हो चुका है या उनमें से किसी एक की मृत्यु हो गई है या फिर दोनों की मृत्यु हो गई है या केवल माता या फिर केवल पिता ही बच्चे का पालन-पोषण कर रहा है, तब ऐसी दशा में भी बालक को दोनों का प्यार एक साथ न मिलने की वजह से वह गुमसुम या अंतर्मुखी बन सकता है।
- माता-पिता का किसी एक बच्चे के प्रति अति लगाव होना तथा दूसरे की अनदेखी करना भी कई प्रकार से बालक के अंदर व्यवहारगत समस्याओं को जन्म दे सकता है। जैसे लड़कों के प्रति अति लगाव रखना और लड़कियों की उपेक्षा करना। यह अति लगाव समान जेंडर में भी पाया जा सकता है।

परिवार का अनुशासन – एडम्स ने अपनी किताब 'मार्डन डेवलपमैंट इन ऐजुकेशनल प्रैक्टिस' में तीन प्रकार का अनुशासन बताया है। (1) कठोर अनुशासन (2) प्रभावी अनुशासन (3) मुक्त या स्वतंत्र अनुशासन। प्राय: यह देखा गया है कि कठोर अनुशासन बालक के अंदर विरोध की भावना को जन्म देता है। मानसिक रूप से उसे रोग ग्रस्त बनाता है। वहीं स्वतंत्र अनुशासन होने के कारण बालक को अनियन्त्रित स्वतंत्रता मिल जाती है। बालक होने के कारण वह अच्छे या बुरे में अंतर नहीं समझता। जल्दी ही बहकावे में आ जाता है और समाज विरोधी गतिविधियों का हिस्सा बन जाता है। प्रभावी अनुशासन बालक व माता-पिता के बीच सौहार्द्र का वातावरण बनाता है। यह अनियन्त्रित स्वतंत्रता और कठोर अनुशासन के बीच का रास्ता है। माता-पिता बालकों के समक्ष एक आदर्श व्यवहार प्रस्तुत करते हैं। बालक माता-पिता के आदर्श व्यवहार का अनुकरण करके प्रशंसनीय व्यवहार करने का प्रयास करते हैं।

पालन-पोषण की अनुपयुक्त विधियाँ – प्रत्येक बालक अपने साथ कुछ जन्मजात शक्तियाँ लेकर आता है लेकिन उनका पोषण उनके माता-पिता तथा समाज के द्वारा किया जाता है। बालक का पालन पोषण करते समय माता-पिता यदि बालक की उन वास्तविक आवश्यकताओं, जिनकी की बालक को वास्तव में ज़रूरत होती है, को पहचान कर उनकी पूर्ति नहीं कर पाते तब भी वे अप्रत्यक्ष रूप से बालक के अंदर व्यवहारगत समस्याओं को जन्म दे सकते हैं।

परिवार का स्वरूप (टूटते हुए परिवार) – परिवार का स्वरूप भी निम्न व्यवहारगत समस्याओं को जन्म दे सकता है। जैसे यदि विद्यार्थी एकल परिवार में रहता है, तो उसके अंदर अहम की भावना पनप सकती है। उसके समाजिकरण में बाधा आ सकती है। नैतिक मूल्यों का अभाव पाया जा सकता है। परिवार

में अकेले रहने के कारण बाल अपराधों में लिप्त होने की संभावना बनी रहती है।

माता पिता व समाज की आदतें– जिस परिवार व समाज में उसके अधिकतर सदस्य नशा करतें हों, धूम्रपान करते हों, उस परिवार व समाज के विद्यार्थियों में नशे व, धूम्रपान की लत पाई जा सकती है।

विद्यार्थी की आवश्यकताएँ एवं परिवार की आर्थिक दशा– एक विद्यार्थी की कई शारीरिक, मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक आवश्यकताएँ होती हैं। इनमें से कुछ आधारभूत और बुनियादी आवश्यकताएँ होती हैं, जो उनके जीवन के लिए ज़रूरी होती हैं। **अब्राहम मास्लोव** (1970) ने मानवीय अभिप्रेरणा को सोपानक्रमिक आवश्यकताओं के रूप में व्यक्त किया है" उनके अनुसार "सर्वाधिक बुनियादी आवश्यकता शारीरिक आवश्यकताएँ हैं। इन शारीरिक मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर विद्यार्थी का व्यवहार अनुपयुक्त हो जाता है।"

परिवार की आर्थिक दशा भी व्यवहारगत समस्या उत्पन्न होने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। जैसे, गरीबी के कारण माता-पिता अपने बच्चों की भौतिक आवश्यकताओं की समय पर पूर्ति नहीं कर पाते जिसके कारण बच्चों में नकारात्मक व्यवहारगत समस्या उत्पन्न होने की संभावना रहती है। वे अपने बच्चों की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए कमाते हैं और उन्हें पर्याप्त समय एवं प्यार नहीं दे पाते। वहीं दूसरी ओर धनी परिवार की और अधिक धन कमाने की लालसा भी व्यवहारगत समस्या उत्पन्न होने का एक महत्वपूर्ण कारण है क्योंकि वे इस लालसा में अपने बच्चों को पर्याप्त समय एवं प्यार नहीं दे पाते।

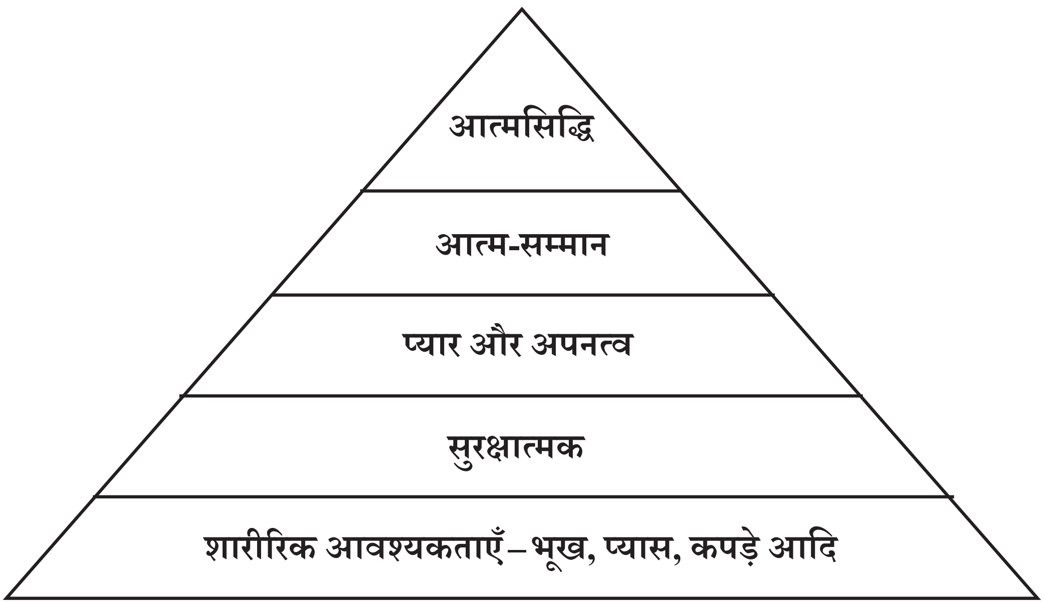

अब्राहम मास्लोव (1970)

Chapter 3.indd 26 6/26/2015 2:51:45 PM

विद्यालय एवं अध्यापक – विद्यार्थी की कुछ व्यवहारगत समस्याएँ अध्यापक की देन हो सकती हैं। जैसे कई बार अध्यापक अपने छात्रों पर व्यंग्यबांण छोड़ते रहते हैं और उन्हें अपमानित करते हैं तथा पक्षपात भी करते हैं। जिसके कारण वह अनजाने में विद्यार्थियों के अंदर भेदभाव की समस्या पैदा कर देते हैं। अध्यापक की अध्यापन प्रणाली और उसका व्यक्तित्व भी छात्रों की व्यवहारगत समस्याओं को प्रभावित करते हैं।

विद्यालय तथा कक्षा का भौतिक वातावरण जैसे कक्षा का आकार, कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या, पर्याप्त बैठने की व्यवस्था न होना आदि के कारण भी अध्यापक हर बच्चे के व्यवहार पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाते और अनजाने में विद्यार्थियों के अंदर भेदभाव की समस्या पैदा कर देते हैं।

नकारात्मक पुनर्बलन एवं दंड– कई बार माता-पिता, अध्यापक व अन्य व्यक्तियों द्वारा प्रदान किया गया नकारात्मक पुनर्बलन विद्यार्थियों के नकारात्मक आत्मप्रत्यय को प्रोत्साहन देकर उनमें विभिन्न व्यवहारगत समस्याओं को जन्म देता है।

मित्र-मंडली – विद्यार्थी अपने आस-पास के परिवेश में रहने वाले लोगों से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, औपचारिक और अनौपचारिक रूप से बहुत से व्यवहार सीखते हैं। प्राय: यह देखा जाता है कि विद्यार्थियों के व्यक्तिगत व्यवहार पर उनके मित्रों का व्यवहार बहुत अधिक प्रभाव डालता है यदि अवांछनीय गुणों वाले मित्र एक साथ इक्ट्ठे हो जाते हैं, तो वे समाज को नुकसान पहुँचा सकते हैं क्योंकि वे बहुत जल्दी ही एक दूसरे से व्यवहारगत समस्या को ग्रहण करते हैं।

दूरदर्शन – विद्यार्थियों के दुर्व्यवहार में योगदान करने में मीडिया भी बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। बहुत सारे दूरदर्शन कार्यक्रम, चलचित्र, पत्रिकाएँ आदि में दर्शाए गए चित्र एवं लिए गए प्रसंग व्यवहारगत समस्याओं को बढ़ावा देते हैं।

अनुकरण – दूसरे लोगों के साथ होड़ भी व्यवहारगत समस्या को पनपने में मदद करती है, जैसे आजकल का विद्यार्थी दूसरे लोगों की जीवनशैली को अपनाने की कोशिश करता है परंतु पर्याप्त साधन न होने के कारण वह चोरी करना, ड्रग्स सेवन करना आदि कार्यों में लिप्त हो जाता है।

समाज के अन्य व्यक्तियों का व्यवहार एवं उनकी संगत– समाज के अन्य लोगों के द्वारा किए जाने वाले दुर्व्यवहार के कारण भी विद्यार्थी के अंदर अनुपयुक्त व्यवहार परिवर्तन होने की संभावना होती है, जैसे जब एक पक्ष बार-बार लड़ाई करता है, तो दूसरा पक्ष भले ही शांत प्रवृत्ति का हो परंतु उसे भी कभी-कभी अपने व्यवहार में परिवर्तन करना पड़ता है।

शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य – शारीरिक स्वास्थ्य का मानसिक स्वास्थ्य से घनिष्ठ संबंध होता है यदि विद्यार्थी जन्म के समय से या लंबे समय तक शारीरिक या मानसिक रूप से बीमार रहता है, तो वह अन्य लोगों के साथ सही तालमेल नहीं बैठा पाता। जिसके कारण उसके स्वभाव के साथ-साथ व्यवहार में भी अनुपयुक्त परिवर्तन आ जाता है जैसे चिड़चिड़ा हो जाना, उदासीन हो जाना या आक्रामक हो जाना।

शारीरिक व मानसिक अक्षमता– शारीरिक व मानसिक अक्षमता विद्यार्थी में जन्म के समय तथा जन्म के बाद भी आ सकती है। जैसे यदि किसी विद्यार्थी का जन्म समय से पूर्व हो जाता है या गर्भावस्था के दौरान उसकी माता का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता या फिर वह नशा आदि करती है, तो इसका प्रभाव विद्यार्थी की शारीरिक व मानसिक क्षमता पर पड़ता है। जिसके कारण उसमें शारीरिक व मानसिक अक्षमता आ सकती हैं और वे विद्यार्थी के व्यवहार में अकुशलता को जन्म दे सकती हैं। इसके अलावा समाज और परिवार की नकारात्मक सोच और दोषपूर्ण दृष्टिकोण से जैसे अस्वीकृति, अतिरक्षण और अति उपेक्षा के कारण शारीरिक व मानसिक अक्षमता वाले विद्यार्थियों में कई संवेगात्मक और व्यवहारगत समस्याएँ विकसित हो जाती हैं।

घटना या दुर्घटना – कई बार विद्यार्थी के साथ कोई बड़ी घटना या दुर्घटना घट जाने के कारण भी उसके व्यवहार में सकारात्मक व नकारात्मक परिवर्तन आ जाता है, जैसे उसके सबसे निकट और प्रिय व्यक्ति की यदि अचानक मृत्यु हो जाती है तब भी विद्यार्थी के व्यवहार में अकुशलता आ सकती है।

परिपक्वता एवं अनुभव– विद्यार्थियों में कम परिपक्वता एवं अपर्याप्त अनुभव होने के कारण भी व्यवहारगत समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। जैसे **युवा विद्यार्थियों के पास पर्याप्त जोश होता है परंतु होश अर्थात् अनुभव एवं समझ नहीं होती है जिसके कारण वे बिना सोचे-समझे दुर्व्यवहार करने लगते हैं।**

ज्ञानेन्द्रियों पर नियंत्रण न होना– "हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियों (आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा) को ज्ञान का द्वार कहा जाता है।" किशोरावस्था में इन ज्ञानेन्द्रियों पर नियंत्रण न होने के कारण व्यवहारगत समस्या उत्पन्न होने की संभावना अधिक होती है क्योंकि इस अवस्था में विद्यार्थियों के शरीर में शारीरिक व मानसिक परिवर्तन आते हैं जिसके कारण उनमें कामुकता और उत्तेजना बढ़ती है। दूसरा मुख्य कारण विद्यार्थियों की प्रतिदिन की दिनचर्या में योग, प्राणायाम, ध्यान व चितंन आदि शारीरिक क्रियाओं का शामिल न होना भी है।

संवेगों पर नियंत्रण न होना – संवेगात्मक विकास और व्यवहार कुशलता में प्रत्यक्ष संबंध होता है। यदि विद्यार्थी समय एवं परिस्थिति के अनुसार अपने संवेगों पर नियंत्रण करना सीख जाता है, तो वह समाज के समक्ष एक अच्छे व्यवहार का प्रदर्शन करता है। यदि वह ऐसा नहीं कर पाता, तो अपने संवेगों पर नियंत्रण न होने के कारण वह व्यवहारगत दोषों का शिकार हो जाता है।

बदलती हुई शिक्षा व्यवस्था – कहीं न कहीं हमारी बदलती हुई शिक्षा व्यवस्था भी व्यवहारगत दोष लाने के लिए उत्तरदायी है। आज हम आधुनिकीकरण और प्रतिस्पर्धा के चक्रव्यूह में फ़ंसकर मानवीय मूल्यों और मानवीय व्यवहार को भूल रहें हैं। आजकल की शिक्षा और शिक्षा प्रणाली से मानव मूल्य कहीं दूर हो गए हैं। वह मानव व्यवहार में सुधार करने में कहीं न कहीं असफ़ल होते जा रहे हैं, जिसके कारण विद्यार्थियों में व्यवहारगत समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं।

व्यवहारगत समस्याओं के कारणों को जानकर उनका उपचार करना

उपरोक्त सभी कारण विद्यार्थियों में व्यक्तिगत व्यवहारगत समस्याओं के लिए उत्तरदायी हैं। व्यवहारगत समस्याएँ कई प्रकार की तथा विभिन्न कारणों के द्वारा उत्पन्न होती हैं। व्यवहारगत समस्या में भी व्यक्तिगत भिन्नता का गुण पाया जाता है इसलिए इन समस्याओं से निपटने के लिए कोई एक तरीका सर्वोत्तम नहीं हो सकता। इसी प्रकार दंड के द्वारा भी व्यवहारगत समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता क्योंकि दंड चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक दोनों प्रकार से विद्यार्थी के व्यक्तिगत व्यवहार पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

कोहलबर्ग, वायगोतस्की के अधिगम सिद्धान्तों के अनुसार व्यवहार को सीखा जाता है और यदि हम चाहते हैं कि व्यवहार अच्छा ही बना रहे, तो इसका लगातार अभ्यास करना होगा।

'**रोजर्स** के अनुसार "यदि हम विद्यालय और घर में ऐसा वातावरण तैयार कर दें जिसमें विद्यार्थी को निरंतर प्रेम व आदर मिले, तो अधिकांश व्यवहारगत समस्याएँ दूर की जा सकती हैं। व्यक्ति दूसरों के सदभाव और सकारात्मक सम्मान का मूल्य समझेगा और उसे प्राप्त करने की कोशिश करेगा।"

उपचार विधियाँ

- प्रदर्शनात्मक विधि (आदर्श व्यवहार प्रदर्शन) – नाटक एवं विडियो के द्वारा आदर्श व्यवहार और बुरे व्यवहार में तुलनात्मक अध्ययन, कराना व स्वयं आदर्श व्यवहार को अपनाकर विद्यार्थी के सम्मुख एक जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करना।
- जीवन-कौशल शिक्षा – विभिन्न कौशलों का विकास करना जैसे-
  1. तार्किक चिंतन, निर्णयन कौशल, समस्या निवारण कौशल
  2. अन्त: वैयक्तिक व संप्रेषण कौशल, समझौते की बातचीत, तद्नुभूति
  3. जूझने एवं स्वप्रबंधन संबंधी कौशल, तनाव प्रबंधन, आत्म मूल्यांकन।
- नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा पर बल।
- ध्यान, योग, प्राणायाम आदि क्रियाओं पर बल।
- सामूहिक क्रियाकलाप व समस्या समाधान विधि – समस्या समाधान एक ऐसी विधि है जिसके माध्यम से विद्यार्थियों के सामने विभिन्न प्रकार की व्यवहारगत समस्याएँ रखकर उन्हें उनका समाधान ढूँढने के लिए प्रेरित किया जाता है।
- भूमिका निर्वाह – भूमिका निर्वाह ऐसा कार्यकलाप है, जो खेल के माध्यम से वास्तविक जीवन की स्थितियों का वर्णन करता है तथा जीवन को व्यवहारिक रूप से समझने का अवसर प्रदान करता है।
- तनाव व क्रोध पर नियंत्रण करना सिखाना।
- मार्गदर्शन व परामर्श – यदि समस्या गंभीर प्रकृति की हो तो।
- पुनर्बलन प्रदान करना – मनोवैज्ञानिक **स्किनर** के अनुसार "सकारात्मक पुनर्बलन व्यवहार का सम्यक रूप से अनुसरण करना सिखाता है।"

निष्कर्ष

व्यवहारगत समस्याओं के गंभीर परिणामों को देखते हुए इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि व्यवहारगत समस्याओं का उपचार करना सभी विद्यार्थियों व समाज के हित के लिए महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। व्यवहारगत समस्याओं में सुधार लाने के लिए अध्यापकों द्वारा उपरोक्त उपचार तकनीकों को प्रयोग में लाया जा सकता है। व्यवहारगत समस्याओं के प्रबंधन हेतु अध्यापक, माता-पिता और परामर्शदाता को उचित प्रयास करने चाहिए, उन्हें मिलकर विद्यार्थी के दुर्व्यवहार एवं दुराचार की ओर मित्रवत् व रचनात्मक तरीके से उसका ध्यान आकर्षित करना चाहिए तथा विद्यार्थी को यह समझने में सहायता करनी चाहिए कि उसका व्यवहार अस्वीकार्य क्यों है? और वे किस प्रकार से अपने अनुपयुक्त व्यवहार से छुटकारा पा सकते हैं।

समस्याग्रस्त विद्यार्थियों के प्रति अध्यापकों को प्रभावी और सृजनशील होना चाहिए। *विद्यार्थी का जीवन एक पौधे के जीवन के समान होता है। जिस प्रकार एक पौधा बहुत छोटा होता है, तब वह बहुत कोमल एवं मुलायम होता है उसकी किसी भी शाखा को वांछित दिशा में बिना किसी नुकसान के मोड़ा जा सकता है।* परंतु जब वह पौधा धीरे-धीरे बड़ा होने लगता है और उसकी शाखाओं एवं तनों में कठोरता आनी शुरू हो जाती है उस स्थिति में यदि उसकी किसी भी शाखा को वांछित दिशा में मोड़ा जाता है, तब उसकी शाखा के टूट जाने की पूर्ण संभावना रहती है और पौधे को हानि पहुँच सकती है। ऐसी स्थिति में यदि उसकी किसी भी शाखा को वाँछित दिशा में मोड़ना हो तो उसे मोड़ने के लिए हमें धीरे-धीरे निरंतर प्रयास करना होगा और यह प्रयास तब तक जारी रखना होगा जब तक कि वह शाखा वांछित दिशा में न मुड़ जाए। बिलकुल यही स्थिति विद्यार्थी के व्यवहार की है यदि विद्यार्थी का व्यवहार बाल्यावस्था से ही अनुपयुक्त है, तब उसे कम प्रयत्नों के द्वारा अधिक शीघ्रता एवं आसानी से सुधारा जा सकता है क्योंकि इस अवस्था में विद्यार्थी के अपने विचारों, सिद्धांतों और व्यवहार में कोई स्थिरता नहीं होती। जब वह किशोरावस्था में पहुँचता है, तो उसके अपने स्वयं के विचार, और सिद्धांत बनने लगते हैं वह अपने आचार-विचार और व्यवहार के द्वारा अपनी पहचान बनाने लगता है। उसके व्यवहार में स्थिरता आने लगती है। अगर इस अवस्था में विद्यार्थी अनुपयुक्त व्यवहार करते हैं तब उसमें सुधार लाने के लिए अधिक प्रयास एवं सावधानी की आवश्यकता होती है इसलिए इस समय अध्यापक, माता-पिता व समाज सभी को **धैर्य** एवं **मेहनत** से कार्य करने की आवश्यकता होती है।

संदर्भ

इग्नू. 2010. *निर्देशन तथा उपबोधन, व्यवहारगत समस्याओं की पहचान*, इ. एस 363 (4), आइ. एस. बी. एन. 81-266-0406-9, पेज नं- 9

एडम्स. 1922. *मॉडर्न डवलपमेंट इन एजूकेशनल प्रैक्टिस*, लंदन यूनीवसर्टी प्रैस लि.।

कोहलबर्ग, लॉरेंस. 1981. *एसेज ऑन मॉरल डेवलपमेंट, द फिलोस्फ़ी ऑफ़ मॉरल डेवलपमेंट*, सेन फ्रांसिको, सी ए हारपर एंड रॉ, आइ. एस. बी. एन. 0-6-064760-4।

गेलफेंड एंड जैंसन, डरयू.1982. 'अंडरस्टेंडिंग चाइल्ड बिहेवीयर डिसऑडर', सी. बी. एस. कॉलेज पब्लिशिंग।

भटनागर, आशा एंड गुप्ता, निर्मला. 1998. *निर्देशन तथा उपबोधन , ए प्रैक्टिकल एप्रोच*, वॉ. नं-2, विकास, नयी दिल्ली।

मार्टिन, गैरी. 1992. *बिहेवीयर मोडिफ़िकेशन*, प्रैंटिस हॉल।

मास्लो, एब्राहम. 1970. ए थ्योरी ऑफ़ ह्यूमन मोटिवेशन, *साइक्लोजिकल रिव्यू*, 50 (4),70-96।

रोजर्स, कार्ल. 1951. *क्लाइंट सैंटर्ड थैरपी– इटस करंट प्रैक्टिस, इंपीलीकेशन एंड थ्योरी*, आइ. एस. बी. एन. 1- 84119-840-4।

वाटसन, जे. बी. 1925. *व्यवहारवाद*, न्यूयार्क, डब्लू डब्लू नॉरटन, पेज नं - 82।

वायगोतस्की, एल. एस. 1978. *माइंड इन सोसाइटी–द डवलमेंट ऑफ़ हायर साइक्लोजिकल प्रोसेस एंड डवलपमेंट*, 79-91।